गद्य खंड

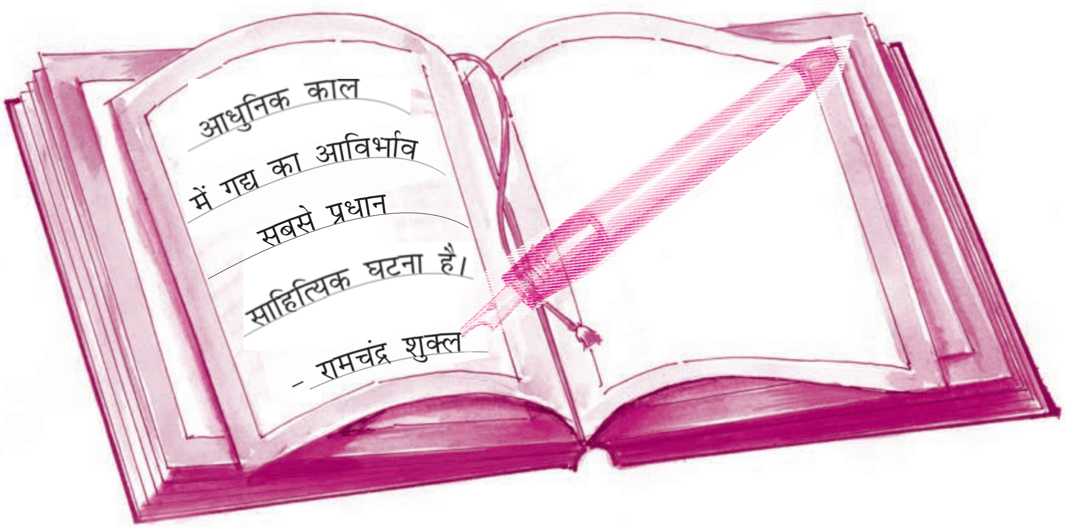

विद्यार्थी अपने नियत अध्ययन को पूरा कर लेने के बाद जो समय बचा सके उसे अपने देश तथा धर्म के इतिहास, अपने पूर्वजों के चरित्र, अपने देश की विगत और वर्तमान अवस्था, दूसरे देशों के इतिहास, समाचार-पत्र, पत्रिकाओं को पढ़ने और विचारने में लगाएँ। अपने अध्ययन को हानि न पहुँचाकर समय मिले तो सभा समाजों में विद्वानों के व्याख्यानों को भी सुनें।

–मदनमोहन मालवीय

जो काम अपना उद्देश्य आप होते हैं और अपने से बाहर कोई स्वार्थ नहीं रखते, उन्हें खेल कहते हैं। अध्यापक का काम अक्सर अपना इनाम आप होता है। वह बच्चों की भाँति ज़िंदगी जीता हुआ बच्चों के साथ एकाकार हो जाता है। एक अच्छे नाटककार या इतिहासकार की भाँति वह एक छोटी-सी बात से, एक साधारण-सी क्रिया से, चेहरे के रंग से और आँखों को देखकर पूरे आदमी की वास्तविकता का पता लगा लेता है। वह अपने विवेक और सूझबूझ से बच्चों के हृदय, बुद्धि तथा आत्मा के छिपे हुए तथ्यों को समझ लेता है। वह कभी हँसकर, कभी तारीफ़ करके, कभी नरमी से, कभी सख्ती से, कभी उकसाकर, कभी आलोचना करके बच्चे की वास्तविकता को समझ कर उसका मार्गदर्शन करता है।

–ज़ाकिर हुसैन

1055CH10

10

स्वयं प्रकाश

स्वयं प्रकाश का जन्म सन् 1947 में इंदौर (मध्यप्रदेश) में हुआ। मैकेनिकल इंजीनियरिंग की पढ़ाई करके एक औद्योगिक प्रतिष्ठान में नौकरी करने वाले स्वयं प्रकाश का बचपन और नौकरी का बड़ा हिस्सा राजस्थान में बीता। फ़िलहाल स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के बाद वे भोपाल में रहते हैं और **वसुधा** पत्रिका के संपादन से जुड़े हैं।

आठवें दशक में उभरे स्वयं प्रकाश आज समकालीन कहानी के महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। उनके तेरह कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें **सूरज कब निकलेगा**, **आएँगे अच्छे दिन भी**, **आदमी जात का आदमी** और **संधान** उल्लेखनीय हैं। उनके **बीच में विनय** और **ईंधन** उपन्यास चर्चित रहे हैं। उन्हें पहल सम्मान, बनमाली पुरस्कार, राजस्थान साहित्य अकादेमी पुरस्कार आदि पुरस्कारों से पुरस्कृत किया जा चुका है।

मध्यवर्गीय जीवन के कुशल चितेरे स्वयं प्रकाश की कहानियों में वर्ग-शोषण के विरुद्ध चेतना है तो हमारे सामाजिक जीवन में जाति, संप्रदाय और लिंग के आधार पर हो रहे भेदभाव के खिलाफ़ प्रतिकार का स्वर भी है। रोचक किस्सागोई शैली में लिखी गईं उनकी कहानियाँ हिंदी की वाचिक परंपरा को समृद्ध करती हैं।

चारों ओर सीमाओं से घिरे भूभाग का नाम ही देश नहीं होता। देश बनता है उसमें रहने वाले सभी नागरिकों, नदियों, पहाड़ों, पेड़-पौधों, वनस्पतियों, पशु-पक्षियों से और इन सबसे प्रेम करने तथा इनकी समृद्धि के लिए प्रयास करने का नाम देशभक्ति है। ***नेताजी का चश्मा*** *कहानी कैप्टन चश्मे वाले के माध्यम से देश के करोड़ों नागरिकों के योगदान को रेखांकित करती है जो इस देश के निर्माण में अपने-अपने तरीके से सहयोग करते हैं। कहानी यह कहती है कि बड़े ही नहीं बच्चे भी इसमें शामिल हैं।*

नेताजी का चश्मा

हालदार साहब को हर पंद्रहवें दिन कंपनी के काम के सिलसिले में उस कस्बे से गुज़रना पड़ता था। कस्बा बहुत बड़ा नहीं था। जिसे पक्का मकान कहा जा सके वैसे कुछ ही मकान और जिसे बाज़ार कहा जा सके वैसा एक ही बाज़ार था। कस्बे में एक लड़कों का स्कूल, एक लड़कियों का स्कूल, एक सीमेंट का छोटा-सा कारखाना, दो ओपन एयर सिनेमाघर और एक ठो नगरपालिका भी थी। नगरपालिका थी तो कुछ-न-कुछ करती भी रहती थी। कभी कोई सड़क पक्की करवा दी, कभी कुछ पेशाबघर बनवा दिए, कभी कबूतरों की छतरी बनवा दी तो कभी कवि सम्मेलन करवा दिया। इसी नगरपालिका के किसी उत्साही बोर्ड या प्रशासनिक अधिकारी ने एक बार 'शहर' के मुख्य बाज़ार के मुख्य चौराहे पर नेताजी सुभाषचंद्र बोस की एक संगमरमर की प्रतिमा लगवा दी। यह कहानी उसी प्रतिमा के बारे में है, बल्कि उसके भी एक छोटे-से हिस्से के बारे में।

पूरी बात तो अब पता नहीं, लेकिन लगता है कि देश के अच्छे मूर्तिकारों की जानकारी नहीं होने और अच्छी मूर्ति की लागत अनुमान और उपलब्ध बजट से कहीं बहुत ज़्यादा होने के कारण काफ़ी समय ऊहापोह और चिट्ठी-पत्री में बरबाद हुआ होगा और बोर्ड की शासनावधि समाप्त होने की घड़ियों में किसी स्थानीय कलाकार को ही अवसर देने का निर्णय किया गया होगा, और अंत में कस्बे के इकलौते हाई स्कूल के इकलौते ड्राइंग मास्टर–मान लीजिए मोतीलाल जी–को ही यह काम सौंप दिया गया होगा, जो महीने-भर में मूर्ति बनाकर 'पटक देने' का विश्वास दिला रहे थे।

जैसा कि कहा जा चुका है, मूर्ति संगमरमर की थी। टोपी की नोक से कोट के दूसरे बटन तक कोई दो फुट ऊँची। जिसे कहते हैं बस्ट। और सुंदर थी। नेताजी सुंदर लग रहे थे। कुछ-कुछ मासूम और कमसिन। फ़ौजी वर्दी में। मूर्ति को देखते ही 'दिल्ली चलो' और 'तुम मुझे खून दो...' वगैरह याद आने लगते थे। इस दृष्टि से यह सफल और सराहनीय प्रयास था। केवल एक चीज़ की कसर थी जो देखते ही खटकती थी। नेताजी की आँखों पर चश्मा नहीं था। यानी चश्मा तो था, लेकिन संगमरमर का नहीं था। एक सामान्य और सचमुच के

चश्मे का चौड़ा काला फ्रेम मूर्ति को पहना दिया गया था। हालदार साहब जब पहली बार इस कस्बे से गुज़रे और चौराहे पर पान खाने रुके तभी उन्होंने इसे लक्षित किया और उनके चेहरे पर एक कौतुकभरी मुसकान फैल गई। वाह भई! यह आइडिया भी ठीक है। मूर्ति पत्थर की, लेकिन चश्मा रियल!

जीप कस्बा छोड़कर आगे बढ़ गई तब भी हालदार साहब इस मूर्ति के बारे में ही सोचते रहे, और अंत में इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि कुल मिलाकर कस्बे के नागरिकों का यह प्रयास सराहनीय ही कहा जाना चाहिए। महत्त्व मूर्ति के रंग-रूप या कद का नहीं, उस भावना का है वरना तो देश-भक्ति भी आजकल मज़ाक की चीज़ होती जा रही है।

दूसरी बार जब हालदार साहब उधर से गुज़रे तो उन्हें मूर्ति में कुछ अंतर दिखाई दिया। ध्यान से देखा तो पाया कि चश्मा दूसरा है। पहले मोटे फ्रेमवाला चौकोर चश्मा था, अब तार के फ्रेमवाला गोल चश्मा है। हालदार साहब का कौतुक और बढ़ा। वाह भई! क्या आइडिया है। मूर्ति कपड़े नहीं बदल सकती लेकिन चश्मा तो बदल ही सकती है।

तीसरी बार फिर नया चश्मा था।

हालदार साहब की आदत पड़ गई, हर बार कस्बे से गुज़रते समय चौराहे पर रुकना, पान खाना और मूर्ति को ध्यान से देखना। एक बार जब कौतूहल दुर्दमनीय हो उठा तो पानवाले से ही पूछ लिया, क्यों भई! क्या बात है? यह तुम्हारे नेताजी का चश्मा हर बार बदल कैसे जाता है?

पानवाले के खुद के मुँह में पान ठुँसा हुआ था। वह एक काला मोटा और खुशमिज़ाज़ आदमी था। हालदार साहब का प्रश्न सुनकर वह आँखों-ही-आँखों में हँसा। उसकी तोंद थिरकी। पीछे घूमकर उसने दुकान के नीचे पान थूका और अपनी लाल-काली बत्तीसी दिखाकर बोला, कैप्टन चश्मेवाला करता है।

क्या करता है? हालदार साहब कुछ समझ नहीं पाए।

चश्मा चेंज कर देता है। पानवाले ने समझाया।

क्या मतलब? क्यों चेंज कर देता है? हालदार साहब अब भी नहीं समझ पाए।

कोई गिराक आ गया समझो। उसको चौड़े चौखट चाहिए। तो कैप्टन किदर से लाएगा? तो उसको मूर्तिवाला दे दिया। उदर दूसरा बिठा दिया।

अब हालदार साहब को बात कुछ-कुछ समझ में आई। एक चश्मेवाला है जिसका नाम कैप्टन है। उसे नेताजी की बगैर चश्मेवाली मूर्ति बुरी लगती है। बल्कि आहत करती है, मानो चश्मे के बगैर नेताजी को असुविधा हो रही हो। इसलिए वह अपनी छोटी-सी दुकान में उपलब्ध गिने-चुने फ्रेमों में से एक नेताजी की मूर्ति पर फिट कर देता है। लेकिन जब कोई ग्राहक आता है और उसे वैसे ही फ्रेम की दरकार होती है जैसा मूर्ति पर लगा है तो कैप्टन

चश्मेवाला मूर्ति पर लगा फ्रेम—संभवतः नेताजी से क्षमा माँगते हुए—लाकर ग्राहक को दे देता है और बाद में नेताजी को दूसरा फ्रेम लौटा देता है। वाह! भई खूब! क्या आइडिया है।

लेकिन भाई! एक बात अभी भी समझ में नहीं आई। हालदार साहब ने पानवाले से फिर पूछा, नेताजी का ओरिजिनल चश्मा कहाँ गया?

पानवाला दूसरा पान मुँह में ठूँस चुका था। दोपहर का समय था, 'दुकान' पर भीड़-भाड़ अधिक नहीं थी। वह फिर आँखों-ही-आँखों में हँसा। उसकी तोंद थिरकी। कत्थे की डंडी फेंक, पीछे मुड़कर उसने नीचे पीक थूकी और मुसकराता हुआ बोला, मास्टर बनाना भूल गया।

पानवाले के लिए यह एक मज़ेदार बात थी लेकिन हालदार साहब के लिए चकित और द्रवित करने वाली। यानी वह ठीक ही सोच रहे थे। मूर्ति के नीचे लिखा 'मूर्तिकार मास्टर मोतीलाल' वाकई कस्बे का अध्यापक था। बेचारे ने महीने-भर में मूर्ति बनाकर पटक देने का वादा कर दिया होगा। बना भी ली होगी लेकिन पत्थर में पारदर्शी चश्मा कैसे बनाया जाए—काँचवाला—यह तय नहीं कर पाया होगा। या कोशिश की होगी और असफल रहा होगा। या बनाते-बनाते 'कुछ और बारीकी' के चक्कर में चश्मा टूट गया होगा। या पत्थर का चश्मा अलग से बनाकर फिट किया होगा और वह निकल गया होगा। उफ़...!

हालदार साहब को यह सब कुछ बड़ा विचित्र और कौतुकभरा लग रहा था। इन्हीं खयालों में खोए-खोए पान के पैसे चुकाकर, चश्मेवाले की देश-भक्ति के समक्ष नतमस्तक होते हुए वह जीप की तरफ़ चले, फिर रुके, पीछे मुड़े और पानवाले के पास जाकर पूछा, क्या कैप्टन चश्मेवाला नेताजी का साथी है? या आज़ाद हिंद फ़ौज का भूतपूर्व सिपाही?

पानवाला नया पान खा रहा था। पान पकड़े अपने हाथ को मुँह से डेढ़ इंच दूर रोककर उसने हालदार साहब को ध्यान से देखा, फिर अपनी लाल-काली बत्तीसी दिखाई और मुसकराकर बोला—नहीं साब! वो लँगड़ा क्या जाएगा फ़ौज में। पागल है पागल! वो देखो, वो आ रहा है। आप उसी से बात कर लो। फ़ोटो-वोटो छपवा दो उसका कहीं।

हालदार साहब को पानवाले द्वारा एक देशभक्त का इस तरह मज़ाक उड़ाया जाना अच्छा नहीं लगा। मुड़कर देखा तो अवाक् रह गए। एक बेहद बूढ़ा मरियल-सा लँगड़ा आदमी सिर पर गांधी टोपी और आँखों पर काला चश्मा लगाए एक हाथ में एक छोटी-सी संदूकची और दूसरे हाथ में एक बाँस पर टँगे बहुत-से चश्मे लिए अभी-अभी एक गली से निकला था और अब एक बंद दुकान के सहारे अपना बाँस टिका रहा था। तो इस बेचारे की दुकान भी नहीं! फेरी लगाता है! हालदार साहब चक्कर में पड़ गए। पूछना चाहते थे, इसे कैप्टन क्यों कहते हैं? क्या यही इसका वास्तविक नाम है? लेकिन पानवाले ने साफ़ बता दिया था कि अब वह इस बारे में और बात करने को तैयार नहीं। ड्राइवर भी बेचैन हो रहा था। काम भी

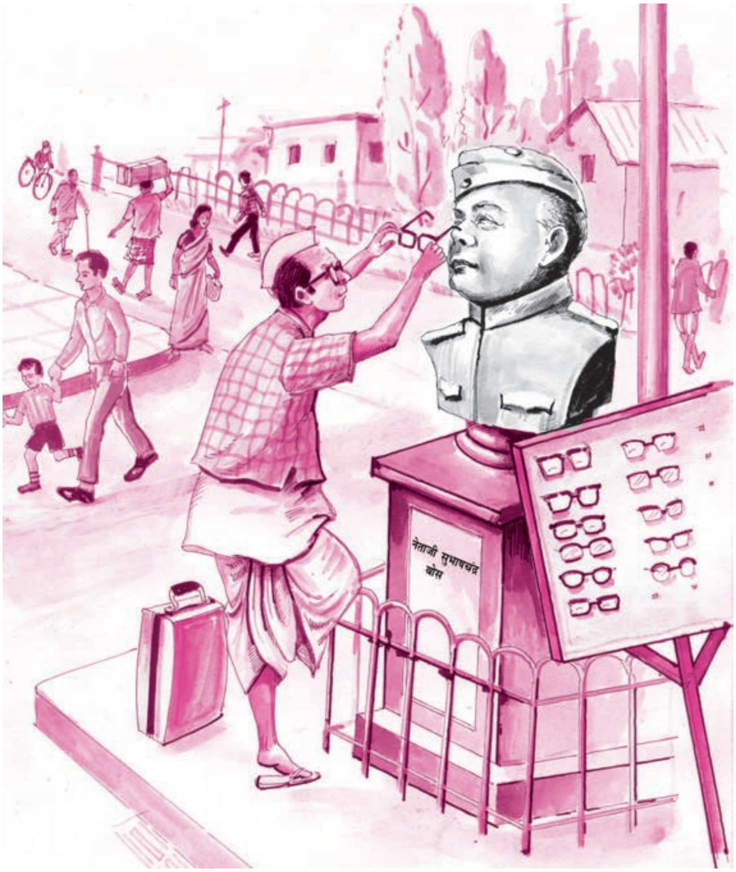

था। हालदार साहब जीप में बैठकर चले गए।

दो साल तक हालदार साहब अपने काम के सिलसिले में उस कस्बे से गुज़रते रहे और नेताजी की मूर्ति में बदलते हुए चश्मों को देखते रहे। कभी गोल चश्मा होता, तो कभी चौकोर, कभी लाल, कभी काला, कभी धूप का चश्मा, कभी बड़े काँचों वाला गोगो चश्मा. ..पर कोई–न–कोई चश्मा होता ज़रूर...उस धूलभरी यात्रा में हालदार साहब को कौतुक और प्रफुल्लता के कुछ क्षण देने के लिए।

फिर एक बार ऐसा हुआ कि मूर्ति के चेहरे पर कोई भी, कैसा भी चश्मा नहीं था। उस दिन पान की दुकान भी बंद थी। चौराहे की अधिकांश दुकानें बंद थीं।

अगली बार भी मूर्ति की आँखों पर चश्मा नहीं था। हालदार साहब ने पान खाया और धीरे से पानवाले से पूछा–क्यों भई, क्या बात है? आज तुम्हारे नेताजी की आँखों पर चश्मा नहीं है?

पानवाला उदास हो गया। उसने पीछे मुड़कर मुँह का पान नीचे थूका और सिर झुकाकर अपनी धोती के सिरे से आँखें पोंछता हुआ बोला – साहब! कैप्टन मर गया।

और कुछ नहीं पूछ पाए हालदार साहब। कुछ पल चुपचाप खड़े रहे, फिर पान के पैसे चुकाकर जीप में आ बैठे और रवाना हो गए।

बार–बार सोचते, क्या होगा उस कौम का जो अपने देश की खातिर घर–गृहस्थी–जवानी–ज़िंदगी सब कुछ होम देनेवालों पर भी हँसती है और अपने लिए बिकने के मौके ढूँढ़ती है। दुखी हो गए। पंद्रह दिन बाद फिर उसी कस्बे से गुज़रे। कस्बे में घुसने से पहले ही खयाल आया कि

कस्बे की हृदयस्थली में सुभाष की प्रतिमा अवश्य ही प्रतिष्ठापित होगी, लेकिन सुभाष की आँखों पर चश्मा नहीं होगा।...क्योंकि मास्टर बनाना भूल गया।...और कैप्टन मर गया। सोचा, आज वहाँ रुकेंगे नहीं, पान भी नहीं खाएँगे, मूर्ति की तरफ़ देखेंगे भी नहीं, सीधे निकल जाएँगे। ड्राइवर से कह दिया, चौराहे पर रुकना नहीं, आज बहुत काम है, पान आगे कहीं खा लेंगे।

लेकिन आदत से मजबूर आँखें चौराहा आते ही मूर्ति की तरफ़ उठ गईं। कुछ ऐसा देखा कि चीखे, रोको! जीप स्पीड में थी, ड्राइवर ने ज़ोर से ब्रेक मारे। रास्ता चलते लोग देखने लगे। जीप रुकते-न-रुकते हालदार साहब जीप से कूदकर तेज़-तेज़ कदमों से मूर्ति की तरफ़ लपके और उसके ठीक सामने जाकर अटेंशन में खड़े हो गए।

मूर्ति की आँखों पर सरकंडे से बना छोटा-सा चश्मा रखा हुआ था, जैसा बच्चे बना लेते हैं।

हालदार साहब भावुक हैं। इतनी-सी बात पर उनकी आँखें भर आईं।

प्रश्न-अभ्यास

1. सेनानी न होते हुए भी चश्मेवाले को लोग कैप्टन क्यों कहते थे?
2. हालदार साहब ने ड्राइवर को पहले चौराहे पर गाड़ी रोकने के लिए मना किया था लेकिन बाद में तुरंत रोकने को कहा–
   - (क) हालदार साहब पहले मायूस क्यों हो गए थे?
   - (ख) मूर्ति पर सरकंडे का चश्मा क्या उम्मीद जगाता है?
   - (ग) हालदार साहब इतनी-सी बात पर भावुक क्यों हो उठे?
3. आशय स्पष्ट कीजिए–

   "बार-बार सोचते, क्या होगा उस कौम का जो अपने देश की खातिर घर-गृहस्थी-जवानी-ज़िंदगी सब कुछ होम देनेवालों पर भी हँसती है और अपने लिए बिकने के मौके ढूँढ़ती है।"
4. पानवाले का एक रेखाचित्र प्रस्तुत कीजिए।
5. "वो लँगड़ा क्या जाएगा फ़ौज में। पागल है पागल!"

   कैप्टन के प्रति पानवाले की इस टिप्पणी पर अपनी प्रतिक्रिया लिखिए।

रचना और अभिव्यक्ति

6. निम्नलिखित वाक्य पात्रों की कौन-सी विशेषता की ओर संकेत करते हैं–
   (क) हालदार साहब हमेशा चौराहे पर रुकते और नेताजी को निहारते।
   (ख) पानवाला उदास हो गया। उसने पीछे मुड़कर मुँह का पान नीचे थूका और सिर झुकाकर अपनी धोती के सिरे से आँखें पोंछता हुआ बोला–साहब! कैप्टन मर गया।
   (ग) कैप्टन बार-बार मूर्ति पर चश्मा लगा देता था।
7. जब तक हालदार साहब ने कैप्टन को साक्षात् देखा नहीं था तब तक उनके मानस पटल पर उसका कौन-सा चित्र रहा होगा, अपनी कल्पना से लिखिए।
8. कस्बों, शहरों, महानगरों के चौराहों पर किसी न किसी क्षेत्र के प्रसिद्ध व्यक्ति की मूर्ति लगाने का प्रचलन-सा हो गया है–
   (क) इस तरह की मूर्ति लगाने के क्या उद्देश्य हो सकते हैं?
   (ख) आप अपने इलाके के चौराहे पर किस व्यक्ति की मूर्ति स्थापित करवाना चाहेंगे और क्यों?
   (ग) उस मूर्ति के प्रति आपके एवं दूसरे लोगों के क्या उत्तरदायित्व होने चाहिए?

9. सीमा पर तैनात फ़ौजी ही देश-प्रेम का परिचय नहीं देते। हम सभी अपने दैनिक कार्यों में किसी न किसी रूप में देश-प्रेम प्रकट करते हैं; जैसे–सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान न पहुँचाना, पर्यावरण संरक्षण आदि। अपने जीवन-जगत से जुड़े ऐसे और कार्यों का उल्लेख कीजिए और उन पर अमल भी कीजिए।
10. निम्नलिखित पंक्तियों में स्थानीय बोली का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है, आप इन पंक्तियों को मानक हिंदी में लिखिए–

    कोई गिराक आ गया समझो। उसको चौड़े चौखट चाहिए। तो कैप्टन किदर से लाएगा? तो उसको मूर्तिवाला दे दिया। उदर दूसरा बिठा दिया।
11. 'भई खूब! क्या आइडिया है।' इस वाक्य को ध्यान में रखते हुए बताइए कि एक भाषा में दूसरी भाषा के शब्दों के आने से क्या लाभ होते हैं?

भाषा-अध्ययन

12. निम्नलिखित वाक्यों से निपात छाँटिए और उनसे नए वाक्य बनाइए–
   (क) नगरपालिका थी तो कुछ न कुछ करती भी रहती थी।
   (ख) किसी स्थानीय कलाकार को ही अवसर देने का निर्णय किया गया होगा।
   (ग) यानी चश्मा तो था लेकिन संगमरमर का नहीं था।
   (घ) हालदार साहब अब भी नहीं समझ पाए।
   (ङ) दो साल तक हालदार साहब अपने काम के सिलसिले में उस कस्बे से गुज़रते रहे।

13. निम्नलिखित वाक्यों को कर्मवाच्य में बदलिए–
    - (क) वह अपनी छोटी-सी दुकान में उपलब्ध गिने-चुने फ्रेमों में से नेताजी की मूर्ति पर फिट कर देता है।
    - (ख) पानवाला नया पान खा रहा था।
    - (ग) पानवाले ने साफ़ बता दिया था।
    - (घ) ड्राइवर ने ज़ोर से ब्रेक मारे।
    - (ङ) नेताजी ने देश के लिए अपना सब कुछ त्याग दिया।
    - (च) हालदार साहब ने चश्मेवाले की देशभक्ति का सम्मान किया।
14. नीचे लिखे वाक्यों को भाववाच्य में बदलिए–

    जैसे–अब चलते हैं। –अब चला जाए।
    - (क) माँ बैठ नहीं सकती।
    - (ख) मैं देख नहीं सकती।
    - (ग) चलो, अब सोते हैं।
    - (घ) माँ रो भी नहीं सकती।

पाठेतर सक्रियता

- लेखक का अनुमान है कि नेताजी की मूर्ति बनाने का काम मजबूरी में ही स्थानीय कलाकार को दिया गया–
    - (क) मूर्ति बनाने का काम मिलने पर कलाकार के क्या भाव रहे होंगे?
    - (ख) हम अपने इलाके के शिल्पकार, संगीतकार, चित्रकार एवं दूसरे कलाकारों के काम को कैसे महत्त्व और प्रोत्साहन दे सकते हैं, लिखिए।
- आपके विद्यालय में शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण विद्यार्थी हैं। उनके लिए विद्यालय परिसर और कक्षा-कक्ष में किस तरह के प्रावधान किए जाएँ, प्रशासन को इस संदर्भ में पत्र द्वारा सुझाव दीजिए।
- कैप्टन फेरी लगाता था।

  फेरीवाले हमारे दिन-प्रतिदिन की बहुत-सी ज़रूरतों को आसान बना देते हैं। फेरीवालों के योगदान व समस्याओं पर एक संपादकीय लेख तैयार कीजिए।
- नेताजी सुभाषचंद्र बोस के व्यक्तित्व और कृतित्व पर एक प्रोजेक्ट बनाइए।
- अपने घर के आस-पास देखिए और पता लगाइए कि नगरपालिका ने क्या-क्या काम करवाए हैं? हमारी भूमिका उसमें क्या हो सकती है?

नीचे दिए गए निबंध का अंश पढ़िए और समझिए कि गद्य की विविध विधाओं में एक ही भाव को अलग-अलग प्रकार से कैसे व्यक्त किया जा सकता है–

देश-प्रेम

देश-प्रेम है क्या? प्रेम ही तो है। इस प्रेम का आलंबन क्या है? सारा देश अर्थात मनुष्य, पशु, पक्षी, नदी, नाले, वन पर्वत सहित सारी भूमि। यह प्रेम किस प्रकार का है? यह साहचर्यगत प्रेम है। जिनके बीच हम रहते हैं, जिन्हें बराबर आँखों से देखते हैं, जिनकी बातें बराबर सुनते रहते हैं, जिनका हमारा हर घड़ी का साथ रहता है, सारांश यह है कि जिनके सान्निध्य का हमें अभ्यास पड़ जाता है, उनके प्रति लोभ या राग हो सकता है। देश-प्रेम यदि वास्तव में अंत:करण का कोई भाव है तो यही हो सकता है। यदि यह नहीं है तो वह कोरी बकवास या किसी और भाव के संकेत के लिए गढ़ा हुआ शब्द है।

यदि किसी को अपने देश से सचमुच प्रेम है तो उसे अपने देश के मनुष्य, पशु, पक्षी, लता, गुल्म, पेड़, वन, पर्वत, नदी, निर्झर आदि सबसे प्रेम होगा, वह सबको चाहभरी दृष्टि से देखेगा; वह सबकी सुध करके विदेश में आँसू बहाएगा। जो यह भी नहीं जानते कि कोयल किस चिड़िया का नाम है, जो यह भी नहीं सुनते कि चातक कहाँ चिल्लाता है, जो यह भी आँख भर नहीं देखते कि आम प्रणय-सौरभपूर्ण मंजरियों से कैसे लदे हुए हैं, जो यह भी नहीं झाँकते कि किसानों के झोंपड़ों के भीतर क्या हो रहा है, वे यदि बस बने-ठने मित्रों के बीच प्रत्येक भारतवासी की औसत आमदनी का परता बताकर देश-प्रेम का दावा करें तो उनसे पूछना चाहिए कि भाइयो! बिना रूप परिचय का यह प्रेम कैसा? जिनके दुख-सुख के तुम कभी साथी नहीं हुए उन्हें तुम सुखी देखना चाहते हो, यह कैसे समझे? उनसे कोसों दूर बैठे-बैठे, पड़े-पड़े या खड़े-खड़े तुम विलायती बोली में 'अर्थशास्त्र' की दुहाई दिया करो, पर प्रेम का नाम उसके साथ न घसीटो। प्रेम हिसाब-किताब नहीं है। हिसाब-किताब करने वाले भाड़े पर भी मिल सकते हैं, पर प्रेम करने वाले नहीं।

हिसाब-किताब से देश की दशा का ज्ञान-मात्र हो सकता है। हित-चिंतन और हित-साधन की प्रवृत्ति कोरे ज्ञान से भिन्न है। वह मन के वेग या भाव पर अवलंबित है, उसका संबंध लोभ या प्रेम से है, जिसके बिना अन्य पक्ष में आवश्यक त्याग का उत्साह हो नहीं सकता।

–आचार्य रामचंद्र शुक्ल